

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 18 — बलराम द्वारा प्रलम्ब-वध

5 October 2026



ग्रीष्म के आकाश में एक विशाल मेघ-श्याम आकृति बलराम को अपने कंधों पर उठाए दौड़ती है — तभी प्रभु की तेजोमय मुष्टि बिजली की तरह गिरती है, और गोपबालकों की चकित दृष्टि के सामने वह दानव-रूप विलीन हो जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध का यह अठारहवाँ अध्याय हमें एक उद्धार-रात्रि के तट से उस ग्रीष्म की प्रखर धूप में ले चलता है, जो प्रभु के चरण पड़ने पर अनन्त वसन्त-सी प्रतीत होती है। शुकदेवजी राजा परीक्षित को बताते हैं कि बलराम और कृष्ण ने वृन्दावन के गोपबालकों के साथ वे दिन किस प्रकार क्रीड़ा में बिताए — जब तक कि उनके मण्डल में एक नया साथी, छद्म मुख धारण किए बलशाली दानव प्रलम्ब, नहीं आ मिला, जो दोनों दिव्य भाइयों को हर ले जाने के लिए आया था।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण

- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)
- अध्याय: 18 (अष्टादश अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: भगवान बलराम द्वारा दानव प्रलम्ब का वध
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: व्रज का वृन्दावन वन, भाण्डीरक वट-वृक्ष के निकट
- केंद्रीय विषय: गोपबालकों के साथ कृष्ण-बलराम की ग्रीष्मकालीन क्रीड़ा; दानव प्रलम्ब का छद्म-वेश और उनके हरण की योजना; बलराम द्वारा प्रलम्ब का वध
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 1-32
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (संस्कृत-हिन्दी, खण्ड 2)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

सत्रहवें अध्याय में शुकदेवजी ने बताया था कि सर्प कालिय यमुना के एक कुण्ड में क्यों छिपा था, और फिर उसी रात कृष्ण द्वारा उस दावाग्नि को पी जाने की कथा सुनाई, जिसने नदी-तट पर सोए व्रजवासियों को घेर लिया था। यह अध्याय उसी उद्धार की आभा में आरम्भ होता है — कृष्ण उन कुटुम्बियों के बीच गाँव लौटते हैं जो उनकी स्तुति गाए बिना रह नहीं पाते — और फिर वृन्दावन के दीर्घ, उज्ज्वल ग्रीष्म-दिनों और दानव प्रलम्ब की लीला की ओर आगे बढ़ता है।

आनन्दित व्रज में पुनरागमन

अपने कुटुम्बियों से घिरे, जिनके हृदय आनन्द से भरे थे और जिनके स्वर बार-बार गीतों में उठते थे, कृष्ण व्रज के उस गाँव में लौट आए जो अपनी गौ-सम्पदा से इतने प्रेमपूर्वक सजाया गया था। (श्लोक 1)

वह ग्रीष्म जो वसन्त-सा प्रतीत हुआ

शुकदेवजी ने आगे बताया कि जब कृष्ण और बलराम गोपों के बीच सामान्य बालकों के वेश में ही रह रहे थे, तब ग्रीष्म ऋतु आई — वह ऋतु जो प्रायः कम ही सुखद लगती है। परन्तु क्योंकि भगवान स्वयं अपने ज्येष्ठ भ्राता के साथ उस भूमि पर विचरते थे, वह ग्रीष्म भी वसन्त की सारी कोमलता धारण कर गया — झरनों की गर्जना झिंगुरों के स्वर को दबा देती, शीतल वायु कमलों की सुगन्ध बहा लाती, और वह भूमि न उग्र ताप जानती न दावाग्नि, घास हरी और नदी-तट नम ही बने रहे। वन में सब रंगों के फूल खिले, मोर-भ्रमर संगीत से वन भर देते, और कोयल मधुर स्वर में बोलती। (श्लोक 2-7)

वृन्दावन के वन में क्रीड़ा



पत्तों, मोर-पंखों और वनफूलों से सुसज्जित कृष्ण और बलराम वृन्दावन के वन-कुंजों को नृत्य, मल्लयुद्ध और अपने गोप-मित्रों के हर सम्भव खेल से भर देते हैं (श्लोक 8-16)।

केवल उस दिन का आनन्द लेने की इच्छा से कृष्ण बलराम के साथ, गोपबालकों और चरते हुए गोधन से घिरे, बाँसुरी बजाते हुए वन में प्रविष्ट हुए। नवीन पत्तों, मोर-पंखों और वनफूलों से सजकर दोनों भ्राता और उनके साथी नृत्य, मल्लयुद्ध और गान से वन-कुंजों को भर देते — कोई बालक गाता, कोई बाँसुरी-करताल बजाता, और अदृश्य रूप से देवगण ही गोपों का वेश धारण करके उन दोनों भ्राताओं की आराधना करने उतर आए। (श्लोक 8-11) वे हर सम्भव खेल खेलते — घूमना, कूदना, हास-परिहास में मल्लयुद्ध, एक-दूसरे के बाल खींचना — और कृष्ण-बलराम भी साथी बनकर मित्रों के नृत्य की प्रशंसा करते। कभी फल फेंकते, कभी आँखें बाँधकर अनुमान का खेल खेलते, कभी पशु-पक्षियों का अनुकरण करते, कभी मण्डूक-सा कूदते, कभी राजा-प्रजा का खेल खेलते — और वृन्दावन में विचरते हुए हर प्रहर को निश्चिन्त आनन्द से भर देते। (श्लोक 12-16)

वह दानव जो गोपबालक बनना चाहता था



दानव प्रलम्ब गोपबालक का वेश धारण कर कृष्ण-बलराम के बीच आ मिलता है, उन्हें हर ले जाने के संकल्प से — परन्तु सर्वद्रष्टा प्रभु उसे पहले ही पहचान चुके हैं (श्लोक 17-18)।

एक दिन, जब दोनों भ्राता और गोपगण उसी वन में गोधन चरा रहे थे, प्रलम्ब नामक एक दानव चुपचाप उनके बीच गोपबालक का रूप धारण कर आ मिला, जिसके हृदय में बलराम और कृष्ण को हर ले जाने की दुष्ट इच्छा थी।

पशूंश्चारयतोर्गोपैस्तद्वने रामकृष्णयोः ।

गोपरूपी प्रलम्बोऽगादसुरस्तज्जिहीर्षया ॥ १७ ॥

paśūṁś cārayator gopais tad-vane rāma-kṛṣṇayoḥ gopa-rūpī pralambo 'gād asuras taj-jihīrṣayā

अर्थ: जब बलराम और कृष्ण गोपों के साथ उस वन में गोधन चरा रहे थे, तब दानव प्रलम्ब गोपबालक का वेश धारण कर वहाँ आया, दोनों भाइयों को हर लेने की इच्छा से। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 17)

परन्तु इस नवागन्तुक से प्रभु कुछ भी छिपा न रह सका; सर्वद्रष्टा भगवान् कृष्ण, जो दाशार्ह वंश में प्रकट हुए थे, उसे भलीभाँति पहचान गए, और फिर भी उन्होंने प्रलम्ब की मित्रता सहजता से स्वीकार कर ली, अपने मन में शान्तिपूर्वक उस दानव के वध का समय और विधि विचारते रहे।

तं विद्वानपि दाशार्हो भगवान् सर्वदर्शनः ।

अन्वमोदत तत्सख्यं वधं तस्य विचिन्तयन् ॥ १८ ॥

taṁ vidvān api dāśārha bhagavān sarva-darśanaḥ anvamodata tat-sakhyam vadham tasya vicintayan

अर्थ: उसे यथार्थ रूप में जानते हुए भी, दाशार्ह वंश के सर्वद्रष्टा भगवान ने उस दानव की मित्रता स्वीकार कर ली, और साथ ही अपने मन में उसके वध का विचार करते रहे। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 18)

वाहक और सवार का खेल

हर प्रकार की क्रीड़ा में निपुण कृष्ण ने एक नया खेल सुझाया: सब गोपबालक दो दिलों में बँट जाएँ, कुछ उनके साथ और शेष बलराम के साथ, जिसमें हारने वाला दल जीतने वालों को वाहन की भाँति उठाए — यों खेलते वे भाण्डीरक नामक एक बड़े वट-वृक्ष तक पहुँचे। वहाँ श्रीदामा, वृषभ और बलराम के दल के बालक जीत गए, और कृष्ण के साथियों को उन्हें उठाना पड़ा: कृष्ण ने श्रीदामा को, भद्रसेन ने वृषभ को, और प्रलम्ब ने — जिसने कृष्ण को उठाना असह्य भार समझा था — इसके स्थान पर बलराम को उठा लिया। (श्लोक 19-24) उन्हें उठाकर प्रलम्ब अस्वाभाविक वेग से दौड़ने लगा, बलराम को निश्चित सीमा से बहुत आगे ले जाने की मनसा से।

अविषह्यं मन्यमानः कृष्णं दानवपुङ्गवः ।

वहन् द्रुततरं प्रागादवरोहणतः परम् ॥ २५ ॥

aviṣahyam manyamānaḥ kṛṣṇam dānava-puṅgavaḥ vahan drutataram prāgād avarohaṇataḥ param

अर्थ: कृष्ण को उठाना असह्य समझकर, वह दानवों में श्रेष्ठ बलराम को उठाए हुए अत्यन्त तेज़ी से दौड़ पड़ा, सवार उतारने की नियत सीमा से बहुत आगे निकल गया। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 25)

प्रलम्ब का भयावह स्वरूप प्रकट होना



मेरु पर्वत-सा भार उठाने से प्रलम्ब का वेग और उसका गोपबालक-वेश दोनों समाप्त हो जाते हैं, और वह आकाश में अपने ही विशाल सत्य-रूप में प्रकट हो जाता है (श्लोक 25-27)।

परन्तु बलराम ने अपने कंधों पर ही अपने शरीर को पर्वतराज मेरु के समान भारी बना लिया; और उस भार के नीचे दानव का वेग सर्वथा समाप्त हो जाने पर वह अपना छद्म-वेश अधिक काल तक न रख सका और अपने वास्तविक रूप में प्रकट हो गया, स्वर्णाभूषणों से दीप्त, बिजली से चमकते और अपनी पीठ पर चन्द्रमा धारण किए हुए श्याम मेघ के समान।

तमुद्रहन् धरणिधरेन्द्रगौरवं महासुरो विगतरयो निजं वपुः ।

स आस्थितः पुरटपरिच्छदो बभौ तडिद्युमानुडुपतिवाडिवाम्बुदः ॥ २६ ॥

*tam udvahan dharāṇi-dharendra-gauravaṁ mahāsuro vigata-rayo nijaṁ vapuḥ sa āsthitaḥ
puraṭa-paricchado babhau taḍid-dyumān uḍupati-vāḍ ivāmbudaḥ*

अर्थ: पर्वतराज के समान उस भार को उठाते हुए, वह महादानव, जिसका वेग अब क्षीण हो चुका था, अपना छद्म-रूप त्यागकर अपने ही स्वरूप में स्थित हो गया, स्वर्ण से दीप्त, बिजली से चमकते और चन्द्रमा को पीठ पर धारण करते मेघ के समान। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 26)

आकाश में विचरते उस विशाल रूप को, जलती हुई आँखों, भयानक भौंहों, क्रूर दाढ़ों और अग्नि-सी ज्वलित केशराशि के साथ देखकर, हलधर बलराम को एक क्षण के लिए भय की छाया छू गई।

निरीक्ष्य तद्वपुरलमम्बरे चरत् प्रदीप्तदृग् भुकुटितटोग्रदंष्ट्रकम् ।

ज्वलच्छिखं कटककिरीटकण्डलत्विषाद्भुतं हलधर ईषदन्नसत् ॥ २७ ॥

*nirīkṣya tad-vapur alam ambare carat pradipta-dṛg bhrū-kuṭi-taṭogra-daṁṣṭrakam jvalac-
chikham kaṭaka-kirīṭa-kunḍala- tviṣādbhutaṁ haladhara īṣad atrasat*

अर्थ: आकाश में विचरते उस विशाल शरीर को, जलती आँखों, भयानक भौंहों, क्रूर दाढ़ों, अग्नि-सी केशराशि और कंकण-मुकुट-कुण्डलों की विस्मयकारी चमक के साथ देखकर, हलधर बलराम को क्षणिक भय हुआ। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 27)

बलराम का तेजोमय आघात



क्षण भर में अपनी निर्भय स्मृति लौट आने पर, बलराम एक ही आघात से दानव को गिरा देते हैं, उसकी महत्वाकांक्षा वहीं समाप्त कर देते हैं जहाँ वह उसे ले गई थी (श्लोक 28-29)।

वह भय एक क्षण से अधिक न टिका; तुरन्त ही उनकी अपनी निर्भय स्मृति लौट आई, और बलराम ने उस शत्रु पर, जो उन्हें किसी लुटे हुए खजाने की भाँति आकाश में हर ले जाने का दुस्साहस कर रहा था, क्रोधपूर्वक अपनी दृढ़ मुष्टि उसके मस्तक पर दे मारी — ठीक वैसे ही जैसे इन्द्र अपने वज्र से किसी पर्वत को चूर कर देते हैं।

अथागतस्मृतिरभयो रिपुं बलो विहायसार्थमिव हरन्तमात्मनः ।

रुषाहनच्छिरसि दृढेन मुष्टिना सुराधिपो गिरिमिव वज्ररंहसा ॥ २८ ॥

*athāgata-smṛtir abhayaḥ ripuṁ balaḥ vihāya sārtham iva harantam ātmanaḥ ruṣāhanac chirasi
dṛḍhena muṣṭinā surādhipo girim iva vajra-ramhasā*

अर्थ: स्मृति लौट आने पर निर्भय बलराम ने उस शत्रु पर, जो उन्हें किसी बहुमूल्य वस्तु की भाँति आकाश में हर ले जा रहा था, क्रोध में अपनी दृढ़ मुष्टि से उसके मस्तक पर आघात किया, उसी वज्र-वेग से जिससे देवराज पर्वत को चूर कर देते हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 28)

प्रभु के उस एक ही स्पर्श से दानव का वह तामसी तेज टिक न सका; उसका विशाल शरीर अपनी सारी शक्ति खोकर धराशायी हो गया, मानो वज्राहत कोई पर्वत चूर-चूर होकर बिखर जाए — और इस प्रकार वह लीला, जो एक बालक-क्रीड़ा के रूप में आरम्भ हुई थी, उस दानव की अपनी ही महत्वाकांक्षा द्वारा, शब्दशः, उसके अन्त तक ले जाई गई।

स आहतः सपदि विशीर्णमस्तको मुखाद् वमन् रुधिरमपस्मृतोऽसुरः ।

महारवं व्यसुरपतत् समीरयन् गिरिर्यथा मघवत आयुधाहतः ॥ २९ ॥

*sa āhataḥ sapadi viśīrṇa-mastako mukhād vaman rudhiram apasmṛto 'suraḥ mahā-ravaṁ
vyasur apatat samīrayan girir yathā maghavata āyudhāhataḥ*

अर्थ: उस आघात से उसी क्षण उस दानव के प्राण छूट गए, और वह एक महान् चीत्कार के साथ आकाश से गिर पड़ा, ठीक वैसे ही जैसे इन्द्र के अस्त्र से आहत कोई पर्वत गिरता है। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 29)

गोपों का आनन्द और देवताओं की प्रशंसा

बलशाली बलराम के हाथों प्रलम्ब को गिरा देख गोपबालक अत्यन्त विस्मित हो उठे और बार-बार पुकार उठे, “साधु! साधु!”; उन्होंने उन्हें ऐसे गले लगाया जैसे वे मृत्यु से लौटकर आए हों, उनके हृदय प्रेम से अभिभूत थे। और ऊपर आकाश में देवगण, पापी प्रलम्ब के वध से परम आनन्दित होकर, उसी हर्षपूर्ण उद्धोष के साथ बलराम पर फूलों की मालाएँ बरसाने लगे।

पापे प्रलम्बे निहते देवाः परमनिर्वृताः ।

अभ्यवर्षन् बलं माल्यैः शशंसुः साधु साध्विति ॥ ३२ ॥

*pāpe pralambe nihate devāḥ parama-nirvṛtāḥ abhyavarṣan balaṁ mālāyāiḥ śaśaṁsuḥ sādhu
sādhv iti*

अर्थ: पापी प्रलम्ब के वध हो जाने पर, देवगण परम आनन्द से भरकर बलराम पर फूलों की मालाएँ बरसाने लगे और “साधु! साधु!” कहकर उनकी प्रशंसा की। (स्कन्ध 10, अध्याय 18, श्लोक 32)

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रभु का ज्ञान उनकी क्रीड़ा में भी कभी नहीं सोता। कृष्ण ने प्रलम्ब को गोपबालक के वेश में आते ही पहचान लिया (श्लोक 17), फिर भी उसकी मित्रता स्वीकार कर ली, अपने ही संकल्प में शान्तिपूर्वक न्याय का क्षण धारण किए रखते हुए (श्लोक 18)। जब तक वे देख रहे हैं, कुछ भी उनसे छिपा नहीं रहता, और डरने की कोई आवश्यकता नहीं।

2. सहज आनन्द भी गहन उद्देश्य को वहन कर सकता है। नृत्य, फल-क्रीड़ा और मण्डूक-कूद के दीर्घ प्रहर (श्लोक 9-16) दर्शाते हैं कि प्रभु की लीला कभी निरुद्देश्य नहीं होती; वृन्दावन की एक निश्चिन्त ग्रीष्म-सन्ध्या भी उनके भक्तों की रक्षा की ओर ही अग्रसर थी।

3. दुष्ट योजना अपने ही विनाश की भूमि तैयार करती है। प्रलम्ब दोनों भाइयों को हरने आया था (श्लोक 17), और कृष्ण को उठाने के अपने ही भय ने, जिसके कारण उसने बलराम को उठाकर खेल की सीमा से आगे भाग जाने का चुनाव किया (श्लोक 25), उसे सीधे उसकी मृत्यु तक पहुँचाया। कुचक्री की चतुराई प्रायः उसके ही विनाश का मार्ग बन जाती है।

4. भय की एक झलक प्रभु के स्वयं को स्मरण करते ही विलीन हो जाती है। दानव के भयावह रूप के समक्ष बलराम का क्षणिक संकोच (श्लोक 27) उनकी निर्भय प्रकृति लौट आते ही समाप्त हो गया (श्लोक 28) — यह स्मरण कराता है कि प्रभु की सच्ची शक्ति की ओर एक छोटा-सा मोड़ भी सारा भय तुरन्त मिटा देता है।

5. अधर्म का पतन सम्पूर्ण सृष्टि के लिए हर्ष का विषय है। प्रलम्ब के वध पर पृथ्वी के गोप और स्वर्ग के देवता दोनों ही आनन्दित हुए (श्लोक 30-32); अधर्म का निवारण कभी किसी एक की निजी विजय नहीं होती, अपितु एक ऐसा हर्ष है जो धर्म के सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हो जाता है।

एक भक्तिमय चिन्तन

यह अध्याय अपने आश्चर्य को सबसे सरल दृश्य के भीतर रखता है — एक उष्ण दिन में वाहक-सवार का बालक-खेल। एक दानव छद्म मुस्कान धारण कर उनके बीच आ मिलता है, और जिन दो भाइयों को उसने नष्ट करने के लिए चुना है, वे हँसते और अपने गोधन की देखभाल करते रहते हैं जैसे कुछ भी विषम न हो — क्योंकि वास्तव में कुछ भी विषम नहीं था। हम आज के पाठक प्रायः यही मानते हैं कि संकट के आने से पहले ही भय आ जाना चाहिए, कि चिन्ता के बल पर ही सुरक्षा मिलती है। परन्तु यहाँ कृष्ण सहज ही क्रीड़ा करते हैं, दानव को भलीभाँति जानते हुए भी, और बलराम, उस क्षणिक भय में भी, अपनी निर्भय शक्ति से एक क्षण से अधिक दूर नहीं रहते। सम्भवतः यही इस कथा का शान्त सन्देश है — प्रभु को हमारी रक्षा के लिए हमारी चिन्ता नहीं, केवल हमारे निकट बने रहने की आवश्यकता है। गोपों को तो यह भी ज्ञान न था कि वे संकट में हैं, जब तक आकाश दानव के कंधों से अन्धकारमय न हो गया — और तब तक आघात पहले ही पड़ चुका था। इस अविचलित विजय से हम भी यही सीखें कि उन्हीं बालकों की भाँति सहज विश्राम करें, और भय जो भी वेश धारण करे, उनके स्मरण को ही अपना मार्ग बनने दें।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब कुछ या कोई आपको विचलित करे, तब क्षण भर रुककर देखें कि क्या आप उस चिन्ता को स्वयं वहन कर रहे हैं, या उसे शान्तिपूर्वक प्रभु के हाथों में रख रहे हैं — जैसे गोपबालक निर्भय होकर खेलते रहे जबकि कृष्ण स्वयं उन सभी की रक्षा कर रहे थे। स्मरण करें कि बलराम की अपनी शक्ति उन्हें अपना स्वरूप याद आते ही कितनी शीघ्र लौट आई, और चिन्ता के किसी दीर्घ चक्र के स्थान पर उनका एक संक्षिप्त, स्थिर स्मरण रख लें। आरम्भ करें, और समाप्त करें, धीरे-धीरे यह जपकर: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह अठारहवाँ अध्याय कृष्ण और बलराम को एक उद्धारित व्रज से उस वसन्त-सी ग्रीष्म के फूलों से सुवासित दिनों में ले चलता है, जिसमें गोपबालकों के सम्भव हर खेल भरे थे। उस सरल जगत् में दानव प्रलम्ब छद्म-वेश धारण कर, दोनों भाइयों को हर ले जाने के निश्चय से आता है; परन्तु कृष्ण का अचूक ज्ञान पहले ही उसे पहचान चुका था, और बलराम ही, दानव के भयावह कंधों पर आकाश में ऊँचे उठाए

जाकर, एक ही मुष्टि-आघात से उसे गिरा देते हैं। गोप बलराम को ऐसे गले लगाते हैं जैसे वे मृत्यु से लौटे हों, और देवता हर्षपूर्ण प्रशंसा में उन पर फूल बरसाते हैं। एक ग्रीष्म-क्रीड़ा से एक दानव के पतन तक, यह अध्याय दर्शाता है कि प्रभु की सतर्कता क्रीड़ा में भी कभी विश्राम नहीं लेती, और कोई छद्म-वेश उनके स्मरण से आगे नहीं टिक सकता। हम भी उसी अविचलित, सदा-जागृत रक्षा में विश्राम करना सीखें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

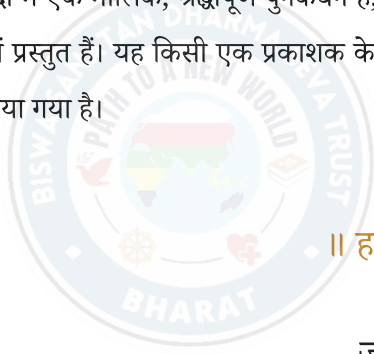
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (संस्कृत-हिन्दी, खण्ड 2), दशम स्कन्ध (पूर्वार्ध), अष्टादश अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञान · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।



॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-18-lord-balarama-slays-pralamba-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञान · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट